

Premchand
Bade Bhai Saheb
Chapter 1
DV

मेरे भाई साहब मुझसे पाँच साल बड़े थे, लेकिन केवल तीन दरजे आगे। उन्होंने भी उसी उम्र में पढ़ना शुरू किया था ; जब मैंने शुरू किया था, लेकिन तालीम जैसे महत्व के मामले में वह जल्दीबाजी से काम लेना पसन्द न करते थे। इस भवन की बुनियाद खूब मजबूत डालना चाहते थे, जिस हर आलीशान महल बन सके। क साल का काम दो साल में करते थे। कभी-कभी तीन साल भी लग जाते थे। बुनियाद ही पुख्ता न हो तो मकान कैसे पायेदार बने ?

मैं छोटा था, वह बड़े थे । मेरी उम्र नौ साल की थी, वह चौदह साल के थे। उन्हें मेरी तंबीह और निगरानी का पूरा, जन्मसिद्ध अधिकार था । और मेरी शालीनता इसी में थी कि उनके हुक्म को कानून समझूँ।

वह स्वभाव से बड़े अध्ययनशील थे। हरदम किताब खोले बैठे रहते और शायद दिमाग को आराम देने के लि कभी कापी पर कभी किताब के हाशियों पर चिड़ियों, कुत्तों, बिल्लियों की तसवीरें

बनाया करते थे। कभी-कभी क ही नाम या शब्द या वाक्य दस बीस बार लिख डालते। कभी क शेर को बार-बार सुन्दर अक्षरों में नकल करते। कभी`सी शब्द-रचना करते, जिसमें न कोई अर्थ होता न कोई सामंजस्य । मसलन क बार उनकी कापी पर मैंने यह इबारत देखी-- स्पेशल, अमीना,

भाइयों-भाइयों, दरअसल, भाई-भाई, राधेश्याम, श्रीयुत् राधेश्याम, क घंटे तक-इसके बाद क आदमी का चेहरा बना हुआ था। मैंने बहुत चेष्टा की कि इस पहेली का अर्थ निकालूँ लेकिन असफल रहा। और उनसे पूछने का साहस न हुआ। वह नवीं जमात में थे, मैं पांचवीं

में। उनकी रचनाओं को समझना मेरे लि छोटे मुँह बड़ी बात थी।

मेरा जी पढ़ने में बिल्कुल न लगता था। क घंटा भी किताब लेकर बैठना पहाड़ था। मौका पाते ही होस्टल से निकल कर मैदान में आ जाता और कभी कंकरियाँ उछालता, कभी कागज की तितलियाँ उड़ाता और कहीं कोई साथी मिला तो पूछना ही क्या। कभी चारदीवारी पर चढ़ कर नीचे कूद रहे हैं, कभी फाटक पर सवार, उसे आगे-पीछे चलाते हु मोटरकार का आनंद उठा रहे हैं ; लेकिन कमरे में आते ही भाई साहब का वह रौद्र रूप देख कर प्राण सूख जाते। उनका पहला सवाल होता- कहाँ थे ? हमेशा यह सवाल उसी ध्वनि में पूछा जाता था और इसका जवाब मेरे पास केवल मौन था। न जाने मेरे मुँह से यह बात क्यों न निकलती कि जरा बाहर खेल रहा था। मेरा मौन कह देता था कि मुझे अपना अपराध स्वीकार है और भाई साहब के लि इसके सिवा और कोई इलाज न था कि स्नेह और रोष से मिले हु शब्द में मेरा सत्कार करें।

‘इस तरह अँगरेजी पढ़ोगे, तो जिन्दगी भर पढ़ते रहोगे और क हर्फ न आयेगा। अँगरेजी पढ़ना कोई हँसी-खेल नहीं है कि जो चाहे पढ़ ले, नहीं`रा गैरा नत्थू खैरा भी सभी अंग्रेजी के विद्वान हो जाते। यहाँ दिन-रात आँखें फोड़नी पड़ती हैं और खून जलाना पड़ता है, तब कहीं यह विद्या

आती है। और आती क्या है कहने को आ जाती है। बड़े-बड़े विद्वान भी शुद्ध अंग्रेजी नहीं लिख सकते,बोलना तो दूर रहा। और मैं कहता हूँ तुम कितने घोंघा हो कि मुझे देख कर भी सबक नहीं लेते। मैं कितनी मेहनत करता हूँ यह तुम अपनी आँखों से देखते हो,अगर नहीं देखते तो यह तुम्हारी आँखों का कुसूर है, तुम्हारी बुद्धि का कुसूर है। इतने मेले-तमाशे होते हैं, मुझे तुमने कभी देखने जाते देखा ? रोज ही क्रिकेट और हाकी मैच होते हैं, मैं पास नहीं फटकता। हमेशा पढ़ता रहता हूँ । उस

पर भी क-क दरजे में दो-दो, तीन-तीन साल पड़ा रहता हूँ, फिर तुम कैसे आशा करते हो कि तुम यों खेल-कूद में वक्त गंवा कर पास हो जाओगे ? मुझे तो दो-तीन साल लगते हैं। तुम उम्र भर इस दरजे में पड़े सड़ते रहोगे ? अगर तुम्हें इस तरह उम्र गवाँनी है, तो बेहतर है, घर चले जाओ, मजे से गुल्ली-डंडा खेलो। दादा की गाढ़ी कमाई के रुपये क्यों बरबाद करते हो ?

मैं यह लताड़ सुनकर आँसू बहाने लगता। जवाब ही क्या था अपराध तो मैंने किया, लताड़ कौन सहे ? भाई-साहब उपदेश की कला मैं निपुण थे। 'सी-सी' लगती बात कहते, 'सी-सी' बात कहते, 'से-से' सूक्ति-बाण चलाते कि मेरे जिगर के टुकड़े-टुकड़े हो जाते और हिम्मत टूट जाती। इस तरह जान तोड़ कर मेहनत करने की शक्ति मैं अपने में न पाता था। और उस निराशा में जरा देर के लिए मैं सोचने लगता-क्यों न घर चला जाऊँ। जो काम मेरे बूते से बाहर है, उसमें हाथ डाल कर क्यों अपनी जिन्दगी खराब करूँ। मुझे अपना मूर्ख रहना मंजूर था, लेकिन उतनी मेहनत

से मुझे

तो चक्कर आ जाता था। लेकिन घंटे दो घंटे बाद निराशा के बादल फट जाते और इरादा करता कि आगे खूब जी लगा कर पढ़ूँगा। चटपट क टाइमटेबुल बन डालता। बिना पहले से नक्शा बनाये, कोई स्कीम तैयार किये, काम कैसे शुरू करूँ ? टाइम टेबिल में खेल-कूद की मद बिलकुल उड़ जाती। प्रातः काल उठना, छः बजे मुँह-हाथ धो, नाश्ता कर पढ़ने बैठ जाना। छः से आठ तक अँगरेजी, आठ से नौ तक हिसाब, नौ से साढ़े नौ तक इतिहास, फिर भोजन और स्कूल। साढ़े तीन बजे स्कूल से वापस होकर आधा घंटा आराम, चार से पाँच तक भूगोल, पाँच से छः तक ग्रामर, आधा घंटा होस्टल के सामने ही टहलना, साढ़े छः सात तक अँगरेजी कम्पोजीशन, फिर भोजन कर के आठ से नौ अनुवाद, नौ से दस तक हिन्दी, दस से ग्यारह तक विविध विषय, फिर विश्राम।

मगर टाइम-टेबिल बना लेना क बात है उस पर अमल करना दूसरी बात पहले ही दिन से उसकी अवहेलना शुरू हो जाती। मैदान की वह सुखद हरियाली हवा के वह हल्के-हल्के झोंके,

फुटबाल की उछल-कूद, कबड्डी दाव-घात, बाली-बाल की वह तेजी और फुर्ती मुझे अज्ञात और

अनिवार्य रूप से खींच ले जाती और वहाँ जाते ही मैं सब कुछ भूल जाता। वह जानलेवा टाइम-टेबिल वह आँख फोड़ पुस्तकें, किसी की याद न रहती और फिर भाई साहब को नसीहत और फजीहत का अवसर मिल जाता। मैं उनके साथे से भागता, उनकी आँखों से रहने की चेष्टा करता, कमरे में इस तरह दबे पाँव आता कि उन्हें खबर न हो। उनकी नजर मेरी ओर उठी और मेरे प्राण निकले। हमेशा सिर पर नंगी तलवार लटकती मालूम होती। फिर भी जैसे मौत और विपत्ति के बीच में भी आदमी मोह और माया के बन्धन में जकड़ा रहता है, मैं फटकार और घुड़कियाँ खाकर भी खेल कूद का तिरस्कार न कर पाता ?

सालाना इम्तहान हुआ । भाई साहब फेल हो गये, मैं पास हो गया और दरजे में प्रथम आया। मेरे और उनके बीच में केवल दो साल का अंतर रह गया। जी में आया, भाई साहब को आढ़े हाथों लूँ- आपकी वह घोर तपस्या कहाँ गयी ? मुझे देखि, मजे से खेलता भी रहा और दरजे में औबल भी हूँ। लेकिन वह इतने दुखी और उदास थे कि मुझे उनसे दिली हमदर्दी हुई और उनके घाव पर नमक छिड़कने का विचार ही लज्जास्पद जान पड़ा। हाँ, अब मुझे अपने ऊपर कुछ अभिमान हुआ और आत्माभिमान भी बढ़ा। भाई साहब का वह रोब मुझपर न रहा। आजादी से खेल कूद में शरीक होने लगा। दिल मजबूत था । अगर उन्होंने फिर मेरी फजीहत की तो साफ कह दूँगा- आपने अपना खून जला कर कौन-सा तीर मार लिया। मैं तो खेलते-कूदते दरजे में अव्वल आ गया। जबान से यह हेकड़ी

जताने का साहस न होने पर भी मेरे रंग-ढंग से साफ जाहिर होता था कि भाई साहब का वह आतंक मुझ पर नहीं है। भाई साहब ने इसे भाँप लिया -उनकी सहज बुद्धि बड़ी तीव्र थी और क दिन जब मैं भोर का सारा समय गुल्ली-डंडे की भेंट करके ठीक भोजन के समय लौटा तो भाई साहब ने मानों तलवार खींच ली और मुझ पर टूट पड़े-देखता हूँ इस साल पास हो गये और दरजे में अव्वल आ गये

तो तुम्हें दिमाग हो गया है ; मगर भाई जान, घमंड तो बड़ों-बड़ों का नहीं रहा तो तुम्हारी क्या हस्ती है ? इतिहास में रावण का हाल तो पढ़ा ही होगा। उसके चरित्र से तुमने कौन सा उपदेश लिया, या यों ही पढ़ गये ? महज इम्तहान पास कर लेना कोई चीज नहीं, असल चीज है बुद्धि का विकास। जो कुछ पढ़ो, उसका अभिप्राय समझो। रावण भूमंडल का स्वामी था। उसे राजाओं को चक्रवर्ती कहते हैं। आजकल अँग्रेजों के राज्य का विस्तार बहुत बढ़ा हुआ है, पर इन्हें चक्रवर्ती नहीं कह सकते। संसार के अनेक राष्ट्र अँग्रेजों का अधिपत्य स्वीकार नहीं करते बिल्कुल स्वाधीन हैं। रावण चक्रवर्ती राजा था। संसार के सभी महीप उसे कर देते थे। बड़े-बड़े देवता उसकी गुलामी करते थे। आग और पानी के देवता भी उसके दास थे, मगर उसका अंत क्या हुआ ? घमंड ने उनका नाम

निशान तक मिटा दिया, कोई उसे क चूल्हू पानी देने वाला भी न बचा। आदमी और जो कुकर्म चाहे करे, पर अभिमान न करे, इतराये नहीं। अभिमान किया, और दीन-दुनिया दोनों से गया। शैतान का हाल भी पढ़ा ही होगा। उसे यह अभिमान हुआ था कि ईश्वर का उससे बढ़ कर सच्चा भक्त कोई है ही नहीं। अन्त में यह हुआ कि स्वर्ग से नरक में ढकेल दिया गया। शाहे रूम ने भी क बार अहंकार किया था। भीख माँग-माँग कर मर गया। तुमने तो अभी केवल क दर्जा पास किया है, और अभी से तुम्हारा सिर फिर गया, तब तो तुम आगे बढ़ चुके। यह समझ लो कि तुम अपनी

मेहनत से नहीं पास हु अंधे के हाथ बटेर लग गयी। मगर बटेर केवल क बार हाथ लग सकती है, बार-बार नहीं लग सकती है। कभी-कभी गुल्ली डंडे से भी अंधा-चोट निशाना पड़ जाता है। इससे कोई सफल खिलाड़ी नहीं हो जाता। सफल खिलाड़ी वह है जिसका कोई निशाना खाली न जाये। मेरे फेल होने पर न जाओ।

मेरे दरजे में आओगे, तो दाँतो पसीना आ जायगा, जब अलजबरा और जामेद्री के लोहे

के चने चबाने पड़ेंगे, इंग्लिस्तान का इतिहास पढ़ना पड़ेगा। बादशाहों के नाम याद रखना आसान नहीं, आठ-आठ हेनरी हो गुजरे हैं। कौन सा कांड किस हेनरी के समय में हुआ, क्या यह याद कर लेना आसान समझते हो ! हेनरी सातवें की जगह, हेनरी आठवाँ लिखा और सब नम्बर गायब ! सफाचट। सिफर भी न मिलेगा, सिफर भी। हो किस ख्याल में। दरजनों तो जेम्स हु हैं, दरजनों विलियम,

कोड़ियो चार्ल्स ! दिमाग चक्कर खाने लगता है। आँधी रोग हो जाता है। इन अभागों के नाम भी न जुड़ते थे। क नाम के पीछे दोयम, चहारम, पंचम लगाते चले गये। मुझसे पूछते तो दस लाख नाम बता देता। और जामेट्री तो बस खुदा ही पनाह ! अ ब ज की जगह अ ज ब लिख दिया और सारे नंबर कट गये। कोई इन निर्दयी मुमताहिनों से नहीं पूछता कि आखिर अ ब ज और अ ज ब में क्या फर्क है, और व्यर्थ की बात के लि क्यों छात्रों का खून करते हो ? दाल भात रोटी या भात दाल रोटी खायी, इसमें क्या रखा है। मगर इन परीक्षकों को क्या परवाह ? जो पुस्तक में लिखा है, चाहते हैं कि लड़के अक्षर-अक्षर रट डालें। और इसी रटंत का नाम शिक्षा रख छोड़ा है। और आखिर इन बे सिर पैर की बातों के रटने से फायदा ? इस रेखा पर यह लंब गिरा दो, तो आधार लंब से दूना होना। पूछि, इससे क्या प्रायोजन ? दुगुना नहीं, चौगुना हो जाय या आधा मेरी बला से, लेकिन परीक्षा में पास होना है, तो सब खुराफात याद करनी पड़ेगी कह दिया-समय की पाबन्दी पर क निबन्ध लिखो, जो चार पन्ने से कम न हो। अब आप कापी सामने खोले, कलम हाथ में लिये उसके नाम को रोड़। कौन नहीं जानता कि समय की पाबन्दी बहुत अच्छी बात है, इससे आदमी के जीवन में सयंम आ जाता है, दूसरों का उस पर स्नेह होने लगता है उसके करोबार में उन्नति होती है, लेकिन जरा सी बात पर चार पन्ने कैसे लिखें ? जो बात क वाक्य में कही जा सके उसे चार पन्ने में लिखने की जरूरत ? मैं तो इसे हिमाकत कहता हूँ। यह तो समय की किफायत नहीं, बल्कि उसका दुरुपयोग है कि व्यर्थ में किसी बात को ढूँस दिया जाय। हम चाहते हैं, आदमी को जो कुछ कहना हो, चटपट कह दे और अपनी राह ले। मगर नहीं, आपको चार पन्ने रंगने पड़ेंगे। चाहे जैसे लिखि। और पन्ने भी पूरे फुल स्केप आकार के। यह छात्रों पर अत्याचार नहीं तो और क्या है ? -अनर्थ तो यह है

कि कहा जाता है, संक्षेप में लिखो। समय की पाबंदी पर संक्षेप में क निबंध लिखो, जो चार पन्नें से कम न हो।

ठीक ! संक्षेप में भी तो चार पन्ने हु, नहीं शायद सौ दो सौ पन्ने लिखवाते। तेज भी दौड़ि और धीरे-धीरे भी । है उल्टी बात या नहीं ? बालक भी इतनी सी बात समझ सकता है लेकिन इन अध्यापकों को इतनी तमीज भी नहीं । उस पर दावा है कि हम अध्यापक हैं। मेरे दरजे में आओगे लाला, तो ये सारे पापड़ बेलने पड़ेंगे और तब आटे-दाल का भाव मालूम होगा। इस दरजे में अव्वल आ गये हो, तो जमीन पर पाँव नहीं रखते। इसीलि मेरा कहना मानि। लाख फेल हो गया हूँ लेकिन तुमसे बड़ा हूँ, संसार का मुझे तुमसे ज्यादा अनुभव है। जो कुछ कहता हूँ , गिरह में बाँधि, नहीं पछताइगा।

स्कूल का समय निकट था, नहीं ईश्वर जाने यह उपदेश माला कब समाप्त होती । भोजन आज मुझे निस्वाद सा लग रहा था। जब पास होने पर यह तिरस्कार हो रही है तो फेल हो जाने पर तो शायद प्राण ही ले लि जायँ। भाई साहब ने अपने दरजे की पढ़ाई का भयंकर चित्र खींचा था, उसने मुझे भयभीत कर दिया । कैसे स्कूल छोड़ कर नहीं भागा यही ताज्जुब है। लेकिन इतने तिरस्कार पर भी पुस्तकों में मेरी अरुचि ज्यों की त्यों बनी रही। खेल-कूद का कोई अवसर हाथ से न जाने देता। पढ़ता भी था, मगर बहुत कम बस इतना कि रोज का टास्क पूरा हो जाये और दरजे में जलील न होना पड़े। अपने ऊपर जो विश्वास पैदा हुआ, वह फिर लुप्त हो गया और फिर चोरों का सा जीवन काटने लगा।

फिर सालाना इम्तहान हुआ, और कुछेसा संयोग हुआ कि मैं फिर पास हो गया और भाई साहब फिर फेल हो गये। मैंने बहुत मेहनत नहीं की, पर न जाने कैसे दरजे में अव्वल आ गया ।

मुझे खुद अचरज हुआ । भाई साहब ने प्राणों तक परिश्रम किया था । कोर्स का क -क शब्द चाट

गये थे, दस बजे रात तक इधर चार बजे भोर से उधर, छः से साढ़े नौ तक स्कूल जाने से पहले । मुद्रा कांतिहीन हो

गयी थी। मगर बेचारे फेल हो गये। मुझे उन पर दया आती थी। नतीजा सुनाया गया तो वह रो पड़े और मैं भी रोने लगा। अपने पास होने की खुशी आधी हो गयी। मैं भी फेल हो गया होता, तो भाई साहब को इतना दुःख न होता लेकिन विधि की बात कौन टाले।

मेरे और मेरे भाई साहब के बीच अब केवल क दरजे का अंतर और रह गया। मेरे मन में क कुटिल भावना उदय हुई कि कहीं भाई साहब क साल और फेल हो जायँ, तो मैं उनके बराबर

हो जाऊँ, फिर वह किस आधार पर मेरी फजीहत कर सकेंगे, लेकिन मैंने इस कमीने विचार को दिल से बलपूर्वक निकाल डाला। आखिर वह मुझे मेरे हित के विचार से ही तो डाँटते हैं । मुझे इस वक्त अप्रिय लगता है अवश्य, मगर यह शायद उनके उपदेशों का ही कोई असर हो कि दनादन पास होता जाता हूँ और इतने अच्छे नंबरों से।

अब की भाई साहब बहुत नर्म पड़ गये थे। कई बार मुझे डाँटने का अवसर पाकर भी उन्होंने धीरज से काम लिया। शायद अब वह खुद समझने लगे थे कि मुझे डाँटने का अधिकार उन्हें नहीं रहा, या रहा तो बहुत कम । मेरी स्वच्छन्दता भी बढ़ी। मैं उनकी सहिष्णुता का अनुचित लाभ उठाने लगा। मुझे कुछेसी धारणा हुई कि मैं तो पास हो ही जाऊँगा पढ़ूँ या न पढ़ूँ मेरी तकदीर बलवान है। इसलि भाई साहब के डर से जो थोड़ा बहुत पढ़ लिया करता था, वह बन्द हुआ। मुझे कनकौ उड़ाने का नया शौक पैदा हो गया था और अब सारा समय पतंगबाजी ही की भेंट होता था ; फिर भी मैं भाई साहब का अदब करता था, और उनकी नजर बचाकर कनकौ उड़ाता था। माँझा देना; कन्ने बाँधना, पतंग टूर्नामेंट की तैयारियाँ आदि समस्याँ सब गुप्त रूप से हल की जाती थीं। मैं भाईसाहब को यह संदेह न करने देना चाहता था कि उनका सम्मान और लिहाज मेरी नजरों में कम हो गया है।

क दिन संध्या के समय होस्टल से दूर मैं क कनकौआ लूटने बेतहाशा दौड़ा जा रहा था। आँखें आसमान की ओर थीं और मन उस आकाशगामी पथिक की ओर जो मंद गति से झूमता पतंग की ओर चला जा रहा हो, मानों कोई आत्मा स्वर्ग से निकल कर विरक्त मन से नये संस्कार ग्रहण

करने जा रही हो। बालकों की क पूरी सेना लग्गे और झाड़दार बाँस लि उसका स्वागत करने को

दौड़ी आ रही थी। किसी को अपने आगे-पीछे की खबर न थी। सभी मानों उस पतंग के साथ आकाश में उड़ रहे थे, जहाँ सब कुछ समतल है, न मोटरकारें हैं ,न ट्राम, न गाड़ियाँ।

सहसा भाई साहब से मेरी मुठभेड़ हो गयी, जो शायद बाजार से लौट रहे थे। उन्होंने वहीं

मेरा हाथ पकड़ लिया और उग्र भाव से बोले-इन बाजारी लौंडों के साथ धेले के कनकौ के लि दौड़ते तुम्हें शर्म नहीं आती ? तुम्हें इसका कुछ लिहाज नहीं कि अब नीची जमात में नहीं हो, बल्कि आठवीं जमात में आ गये हो और मुझसे केवल क दरजा नीचे हो । आखिर आदमी को कुछ तो अपनी पोजीशन का ख्याल करना चाहि। क जमाना था कि लोग आठवाँ दरजा पास कर नायब तहसीलदार हो जाते थे। मैं कितने ही मिडिलचियों को जानता हूँ जो आज अव्वल दरजे के डिप्टी मजिस्ट्रेट या सुपरिन्टेन्डेड हैं । कितने ही आठवी जमात वाले हमारे लीडर और समाचार पत्रों के संपादक हैं। बड़े-बड़े विद्वान उनकी मातहत में काम करते हैं और तुम उसी आठवें दरजे में आकर बाजारी लौंडों के साथ कनकौ के लि दौड़ रहे हो ? मुझे तुम्हारी इस कमअकली पर दुःख होता है! तुम जहीन हो, इसमें शक नहीं, लेकिन वह जेहन किस काम का, जो हमारे आत्मगौरव की हत्या कर डाले

? तुम अपने दिल में समझते होगे, मैं भाई साहब से महज क दरजा नीचे हूँ, और अब उन्हें मुझको कुछ कहने का हक नहीं है। लेकिन यह तुम्हारी गलती है। कि मैं तुमसे पाँच साल बड़ा हूँ और चाहे आज तुम मेरी ही जमात में आ जाओ-और परीक्षकों का यही हाल रहा, तो निस्सन्देह अगले साल तुम मेरे समकक्ष हो जाओगे और शायद क साल बाद मुझसे आगे भी निकल जाओ- लेकिन मुझमें तुममें जो पाँच साल का अंतर है, उसे तुम क्या खुदा भी नहीं मिटा सकता मैं तुमसे पाँच साल बड़ा हूँ और हमेशा रहूँगा। मुझे दुनिया का और जिन्दगी का जो तजुरबा है, तुम उसकी बराबरी नहीं कर सकते, चाहे तुम म० और डी० फिल० और डी० लिट्० ही क्यों न हो जाओ। समझ किताबें पढ़ने से नहीं आती, दुनिया देखने से आती है। हमारी अम्माँ ने कोई दरजा पास नहीं किया और दादा भी शायद पाँचवीं-छठी जमात के आगे नहीं ग ; लेकिन हम दोनों चाहे सारी दुनिया की विद्या पढ़ लें, अम्माँ और दादा को हमें समझाने और सुधारने का अधिकार हमेशा रहेगा। केवल इसलि नहीं कि वे हमारे जन्मदाता हैं ; बल्कि इसलि कि उन्हें दुनिया का हमसे ज्यादा तजुरबा है और रहेगा। अमेरिका में किस तरह की राजव्यवस्था है, और आठवें हेनरी ने कितने ब्याह किये और आकाश में कितने नक्षत्र

हैं, यह बातें चाहे न मालूम हों, लेकिन हजारों सी बातें हैं, जिनका ज्ञान उन्हें हम तुमसे ज्यादा है। दैव न करे आज मैं बीमार हो जाऊँ, तो तुम्हारे हाथ-पाँव फूल जायेंगे। दादा को तार तेने के सिवा तुम्हें और कुछ न सूझेगा ; लेकिन तुम्हारी जगह दादा हों, तो किसी को तार न दें, न घबराँ न बदहवास हों। पहले खुद मरज पहचानकर इलाज करेंगे उसमें सफल न हु, तो किसी डाक्टर को बुलायेंगे। बीमारी तो खैर बड़ी चीज है। हम तुम तो इतना भी नहीं जानते कि महीने भर का खर्च महीना भर कैसे चले। जो कुछ दादा भेजते हैं, उसे हम बीस बाईस तक खर्च कर डालते हैं, और फिर पैसे को मुहताज हो जाते हैं। नाश्ता बन्द हो जाता है, धोबी और नाई से मुँह चुराने लगते हैं, लेकिन जितना आज हम और तुम खर्च कर रहे हैं, उससे आधे में दादा ने अपनी उम्र का बड़ा भाग इज्जत और नेकनामी के साथ निभाया है और कुटुम्ब का पालन किया है, जिसमें सब मिल कर नौ आदमी थे। अपने हेडमास्टर साहब ही को देखो म० हैं कि नहीं , और यहाँ के म० नहीं आक्सफोर्ड के ।

क हजार रूपये पाते हैं ; लेकिन उनके घर का इंतजाम कौन करता है ? उनकी बूढ़ी माँ । हेडमास्टर साहब की डिग्री यहाँ बेकार हो गयी। पहले खुद घर का इंतजाम करते थे। खर्च पूरा न पड़ता था। करजदार रहते थे। जब से उनकी माता जी ने प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया है, जैसे घर में लक्ष्मी आ गयी है। तो भाई जान यह गरूर दिल से निकाल डालो कि तुम मेरे समीप आ गये हो और अब स्वतन्त्र हो। मैं (थप्पड़ दिखा कर) इसका प्रयोग भी कर सकता हूँ। तुम्हें मेरी बातें जहर लग रही हैं।

मैं उनकी इस नयी युक्ति से नत मस्तक हो गया । मुझे आज सचमुच अपनी लघुता का

अनुभव हुआ और भाई साहब के प्रति मेरे मन में श्रद्धा उत्पन्न हुई। मैंने सजल आँखों से कहा-हरगिज नहीं। आप जो कुछ फरमा रहे हैं, बिल्कुल सच है और आपको उसके कहने का अधिकार है।

भाईसाहब ने मुझे गले से लगा लिया और बोले--कनकौवे उड़ाने को मना नहीं करता। मेरा जी ललचाता है, लेकिन करूँ क्या, खुद बेराह चलूँ, तो तुम्हारी रक्षा कैसे करूँ ? यह कर्तव्य भी तो मेरे सिर पर है।

संयोग से उसी वक्त क कटा हुआ कनकौवा हमारे ऊपर से गुजरा। उसकी डोर लटक रही थी। लड़कों का क गोल पीछे-पीछे दौड़ा चला आता था। भाई साहब लंबे हैं ही। उछल कर उसकी डोर पकड़ ली और बेतहाशा होस्टल की तरफ दौड़े । मैं पीछे-पीछे दौड़ रहा था।

